IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

प्राचीन भारतीय इतिहास में नारी स्थिति : एक मूल्यांकन

शिबू सिंह

डॉ बीरेन्द्र मणि त्रिपाठी

नेहरू ग्राम भारती

विश्वविद्यालय, प्रयागराज

किसी राष्ट्र की सस्कृति एवं आत्मा के सार के मूल्याकंन का सर्वाधिक सशक्त माध्यम उस राष्ट्र में स्त्रियों की स्थिति को माना जाता है। किसी भी राष्ट्र अथवा समाज के द्वारा महिलाओं के प्रति निर्धारित दृष्टिकोण ही उसका सबसे सशक्त आधार होता है। भारत की प्राचीन संस्कृति में महिलाओं के सम्बन्ध में दृष्टिकोण परिवर्तित स्वरुप में दिखाई देता है। नारी को कभी देवी के रुप में भी पूजा जाता थाए तो कभी उसे निम्नतम श्रेणी में रखकर उसकी गरिमा की अवहेलना की जाती थी। परन्तु यह भी सत्य है कि भारतीय समाज में कुछ अपवादों को छोड दिया जाए तो कभी भी महिलाओं के स्वतंन्त्र अस्तित्व को स्वीकार नही किया जाता रहा है। उसे माता, पत्नी, पुत्री, बहन तथा पुत्रवधू के रुप में सम्मान तो प्राप्त होता था, परन्तु उसका अपना कोई स्वतंन्त्र व्यक्तित्व या अस्तित्व बहुत ही कम देखने को मिलता है।

भारतीय इतिहास की सबसे प्राचीन सैन्धव सभ्यता से जो प्रमाण प्राप्त होते है उनके आधार पर कहा जा सकता है कि उस समय महिलाओं को पूजनीय माना जाता था तथा समाज में उनको विशेष स्थान प्राप्त था। सैन्धव सभ्यता से प्राप्त मुहरों पर मातृशक्ति के प्रतीक के रुप में मातृदेवी के चित्र समाज में उनके स्थान को निर्धारित करते है। सिन्धु सभ्यता में नारी को ऊर्वरा के प्रतीक के रुप में पूजा जाता था।(1) ऐतिहासिक युग अर्थात ऋग्वैदिक काल में पितृसत्तामक सामाजिक संगठन होने पर भी समाज में स्त्रियों की प्रतिष्ठा थी। बौद्रिक, आध्यात्मिक तथा समाजिक जीवन में उसे स्त्री, कन्या तथा माता के रुप में निरन्तर सम्मान दिया जाता था। धार्मिक कृत्यों, सामाजिक उत्सवों एवं समारोहों आदि में वे पुरुष के साथ समान आसन ग्रहण करती थी। पत्नी के रुप में स्त्रिया घर की सम्राज्ञी होती थी। महिलाओं के लिए प्रस्तुत गृहस्वामिनी तथा सहर्धिमणी जैसे शब्द उसके पारिवारिक गरिमा एवं महत्व के परिचायक माने जाते है। कन्याओं को शिक्षा प्राप्त करने का पूर्ण अधिकार प्राप्त था। महिलाए सभाओं में भाग लेती थी, इस दृष्टि से वह सभावती नाम से अभिहित की जाती थी। अनेक स्त्रिया रणकौशल के कारण रणभूमि में अपने पतियों की सहायता करती थी। समाज में पर्दा प्रथा का प्रचलन नही था तथा स्त्रिया स्वतंन्त्रता पूर्वक विचरण कर सकती थी। पुत्र के समान पुत्री को भी उपनयन, शिक्षा एवं यज्ञादि का अधिकार प्राप्त था यद्यिप वंशवृद्धि का अधिकर पुत्र को ही प्राप्त था। वैदिक समाज में गोद लेने की प्रथा का भी प्रचलन था। ऋग्वेद में पत्नी के लिए जायदेस्तम शब्द का प्रयोग किया गया हैए जिसका तात्पर्य होता है पत्नी ही गृह है।(2) समाज में एकपत्नी प्रथा का प्रचलन था परन्तु कुलीन वर्ग में बहुविवाह की प्रथा थी। कन्याओ को अपने विवाह में मत देने का अधिकार तथा अपने वर चुनाव की स्वतंन्त्रता प्राप्त थी। ऋग्वेद में सती प्रथा के सम्बन्ध में साक्ष्य प्राप्त होते थे, जिसमें उसे प्राचीन परम्परा कहा गया, यद्यिप इस काल में यह केवल प्रतीक

रुप में प्रचलित था। इस काल में घोषा, अपाला तथा विश्ववारा जैसी विदुषी महिलओं की जानकारी प्राप्त होती है जो कि उच्च शिक्षित तथा अनेक मंन्त्रो की रचयिता थी। इस काल में महिलाओं को दो अधिकार प्राप्त नही थे। प्रथम उनको राजनीति में भाग लेने का अधिकार नही था तथा द्वितीय उनको सम्पत्ति सम्बन्धी में कोई भाग नही दिया जाता था। ऋग्वैदिक काल में अनेक देवियों का उल्लेख मिलता है, जिनमें अदित, उषा, सरस्वती, श्रद्वा तथा इडा का नाम महत्वपूर्ण है।

उत्तर वैदिक काल में पूर्व काल की अपेक्षा महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन की स्थिति बनने लगी। कन्याओं को उपनयन संस्कार से वंचित कर दिया गया जिसके कारण उनकी शिक्षा अवरुद्व हो गयी। इस काल से सम्बन्धित ऐतरेय ब्राह्मण में कन्याओं के जन्म की निन्दा की गयी है तथा उनके जन्म को चिन्ता का कारण बताया गया है। मैत्रायणी संहिता में स्त्री को द्यूत तथा मदिरा की श्रेणी में रखा गया है।(3) स्त्रियों के लिए संगीत, नृत्य एवं गायन को महत्वपूर्ण माना गया तथा वह पति के साथ यज्ञ में भाग लेती थी। याज्ञवल्क्य की पत्नी मैत्रेयी परम विदुषी महिला के रुप में साहित्य में वर्णित है। राजा जनक के दरबार में गार्गी नामक विदुषी महिला का उल्लेख मिलता है, जिसने याज्ञवल्क्य को वाद विवाद में पराजित किया था। यद्यपि इस प्रकार के उदारहण बहुत ही कम प्राप्त होते है। अविवाहित महिलाए अपने पिता के साथ रहती थी। सामान्यतः बाल विवाह का प्रचलन नही था,परन्तु युवावस्था प्राप्त होने के पश्चात महिलाए अविवाहित नही रहती थी। इस काल में ऐसी मान्यता थी कि स्त्री के बिना पुरुष पूर्ण नही होता। बहुविवाह का प्रचलन केवल धनिक वर्ग एवं शासक वर्ग में ही प्रचलित था। उत्तर वैदिक काल में विधवा स्त्री को पुर्निववाह एवं नियोग का अधिकार प्राप्त था, परन्तु यह मात्र पुत्र की प्राप्ति तक ही सीमित था। चूकि पिता की सम्पत्ति का अधिकारी पुत्र ही माना जाता था, इसलिए पुत्र प्राप्ति पर अत्यधिक जोर दिया जाता था।(4) सामान्यतः विवाह सजातीय होते थेए परन्तु कभी कभी अन्तर्जातीय विवाह के भी प्रमाण प्राप्त होते है।

सूत्रकाल में स्त्रियों की स्थिति निम्न होने लगी तथा उस पर विभिन्न प्रकार के प्रतिबन्ध आरोपित किए जाने लगे। वशिष्ठ धर्मसूत्र में स्त्रियों को स्वतंत्रता के योग्य नही माना गया। बाल्यवस्था में पिता उसकी रक्षा करता है, यौवनावस्था में पति तथा वृद्वावस्था में पुत्र उसकी रक्षा करता है। इस प्रकार स्त्री किसी पुरुष पर आश्रित होकर ही सुरक्षा एवं सम्मान प्राप्त कर सकती थी।(5) इस काल में यदि कोई कन्या यौवनावस्था प्राप्त कर लेती है तथा उसका पिता उसका विवाह नही करता तो वह कन्या स्वयं अपना विवाह कर सकती थी। महाकाव्य काल में एक स्त्री के अनेक पतियों का उल्लेख मिलता है। कुलीन महिलाओं के लिए शिक्षा की व्यवस्था होती थी। महाभारत में स्त्री को धर्म अर्थ तथा काम का मूल बताया गया है तथा उनको समृद्वि का प्रतीक माना गया है। स्वयंवर प्रथा, सती प्रथा, नियोग प्रथा तथा बहुविवाह का प्रचलन इस काल में मिलता है। यद्यिप यह प्रथाए केवल उच्च वर्ग तक ही सीमित थी। मनु स्मृति में स्त्री गरिमा के उच्चतर स्वरुप का निर्देश मिलता है कि जिस स्थान पर महिलाओं का सम्मान किया जाता है वहा देवता निवास करते है।

मौर्यकाल में महिलाओं की स्थिति पूर्ववत बनी रही। चन्द्रगुप्त मौर्य के द्वारा एक यूनानी कन्या से विवाह करना तत्कालीन समाज के लिए एक अनूठी घटना थी। इस काल में स्वयंवर प्रथा तथा विशेष परिस्थितियों में विवाह विच्छेद का अधिकार स्त्रियों को प्राप्त था, जिसके लिए कौटिल्य ने मोक्ष शब्द का प्रयोग किया है। मेगास्थनीज के अनुसार विवाह का मूल लक्ष्य जीवन साथी प्राप्त करना, भोग तथा संतानोत्पत्ति था। स्त्री एवं पुरुष दोनों ही विशेष परिस्थितियों में पुर्निववाह कर सकते थे। विधवा स्त्री अपने श्वसुर की अनुमति से विवाह कर सकती थी। संगोत्र, सपिण्ड तथा संप्रवर विवाह का निषेध किया गया था। बहुविवाह का प्रचलन था परन्तु उसका दायरा बहुत ही सीमित था।(6) इस काल में पर्दा प्रथा का प्रचलन नही मिलता है। चन्द्रगुप्त ने अपनी अगंरक्षिकाओं के रुप में स्त्रियों को नियुक्त किया था। चाणक्य ने अपनी पुस्तक अर्थशास्त्र में स्त्रियों के लिए असूर्यपश्या शब्द का प्रयोग किया है। जिसका तात्पर्य होता है सूर्य को न देखने वाली स्त्री। इसके अतरिक्त अन्तःपुर शब्द का प्रयोग महिलाओं के निवास स्थान के रुप में किया गया है। इससे

यह तथ्य निकल कर सामने आता है कि समाज के उच्च वर्ग में पर्दा प्रथा की प्रवृति बढ रही थी। अर्थशास्त्र में गणिकाओं का उल्लेख मिलता है जिनका प्रमुख गणिकाध्यक्ष नामक अधिकारी होता था। इसके अन्तर्गत अभिनेत्री गायिका तथा नर्तकी को सम्मलित किया जाता है, जो कि राजदरबार से सम्बन्धित होती थी। गणिकाओं की अपनी एक विशिष्ट श्रेणी होती थी, जो अपने रुप एवं गुणों के लिए प्रसिद्व होती थी तथा समाज में उनको मान सम्मान प्राप्त होता था।(7) दक्षिण भारत में बडे बडे मन्दिरों में इनको देवदासी के रुप में रखा जाता था, जो कि देवताओं की सेविका के रुप में कार्य करते थी। गणिकाएं ललित कलाओं में निपुण होती थी तथा वह राज्य की आय का एक साधन होती थी। कुछ गणिकाओं के गुप्तचर एवं निरीक्षिका के रुप में भी नियुक्त किया जाता था।

सातवाहन काल के शासकों ने अपने नाम के साथ अपनी माता के नाम प्रयोग करके स्त्रियों के सम्मान को प्रदर्शित किया गया, यद्यिप उत्तराधिकार के रुप में पुरुष का ही चयन होता रहा था। इस काल में शातकर्णि प्रथम की पत्नी नागानिका तथा गौतमी शातकर्णि की माता गौतमी बलश्री ने प्रशासन में सक्रिय रुप से भाग लिया। इस कालखण्ड में स्त्रियों के द्वारा बडी मात्रा में दान दिए जाने का उल्लेख तत्कालीन अभिलेखों में प्राप्त होता है। यह इस बात का प्रमाण है कि महिलाओं को सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार प्राप्त होते थे।(8) इस काल में प्राप्त अनेक मूर्तियों में हम महिलाओं को अपने पतियों के साथ बौद्व प्रतीकों की पूजा करते हुए, सार्वजनिक सभाओं में भाग लेते हुए तथा अतिथियों का सत्कार करते हुए दिखाया गया है। यह स्पष्ट प्रमाण है कि महिलाओं को शिक्षा सम्बन्धी अधिकार प्राप्त थे।

गुप्तकाल में महिलाओं को प्रतिष्ठित स्थान प्रदान किया गया था तथा उनके जन्म को दुर्भाग्य का कारण नही माना जाता था। यद्यिप पुत्र को अधिक महत्व दिया जाता था। कालिदास की रचना कुमार संभव में कन्या को कुल का प्राण कहा गया है। स्नेह एवं सम्मान की दृष्टि से पुत्र एवं कन्या में भेद कम किया जाता था। स्त्री का पद माता एवं पत्नी के रुप में ऊँचा था तथा उसे स्त्री रत्न एवं वीरप्रसविनी नाम से सम्बोधित किया जाता था।(9) सती प्रथा का प्रचलन था, परन्तु उसे समाज में अधिक मान्यता प्राप्त नही थी। कालिदास एवं वात्स्यायन ने सती प्रथा का उल्लेख किया है। सती प्रथा का प्रथम अभिलेखीय साक्ष्य हमकों इसी कालखण्ड में प्राप्त होता है। नारद एवं पराशर स्मृति में विधवा विवाह का समर्थन किया गया है, परन्तु अन्य स्मृतिकारों ने विधवा विवाह का विरोध किया। गुप्त काल में विवाह की आयु कम हो गयी तथा कन्याओं का विवाह 13 से 14 वर्ष की आयु में ही कर दिए जाने लगा। इस बाल विवाह का मूल कारण दूसरी शताब्दी ईसा0 पूर्व के पश्चात भारत पर होने वाले विदेशी आक्रमण को माना जाता था। बाल विवाह होने के कारण महिलाओं की शिक्षा प्रभावित होने लगी। याज्ञवल्क्य स्मृति कन्या के लिए उपनयन संस्कार तथा वेदाध्यन का पूरी तरह निषेध करती है। अशिक्षित होने के कारण वह आर्थिक रुप से पूरी तरह से पुरुष वर्ग पर निर्भर हो गई। वात्स्यायन ने अपनी पुस्तक कामसूत्र में गणिकाओं को दिए जाने वाले प्रशिक्षण का उल्लेख बिस्तार से किया है। यह पुत्र जन्म के समय तथा अन्य अवसरों पर नृत्य करने के लिए नगर में भ्रमण करती थी। वसंन्तसेना नामक गणिका के द्वारा अपना व्यवसाय छोड कर विवाह करने का उल्लेख मिलता है। इससे यह ज्ञात होता है कि गणिकाए पारिवारिक जीवन व्यतीत कर सकती थी। कालिदास ने उज्जयनि के महाकाल मंन्दिर में नृत्यगान करने वाली देवदासियों का विवरण दिया है।(10)

गुप्तकाल में पर्दा प्रथा का सामान्य प्रचलन नही मिलता तथा महिलाए स्वतंन्त्रतापूर्वक विचरण कर सकती थी। परन्तु गुप्तकाल में ही पहली बार घूघट शब्द का प्रचलन मिलता है, जिससे यह प्रतीत होता है कि कुलीन वर्ग की महिलाए घर से बाहर जाते हुए अपना मुह ढककर चलती है। नारद तथा कात्यायन जैसे स्मृतिकारो ने कन्या को पिता की सम्पत्ति में अधिकार प्रदान किया है।(11) इस काल में महिलाए राजनीतिक कार्य में भी भाग लेती थी। चन्द्रगुप्त द्वितीय की पुत्री प्रभावती गुप्ता ने अपने पति की मृत्यु के पश्चात वाकाटक वंश के प्रशासन को कुशलता पूर्वक संचालित किया।

हर्षवर्धन के शासनकाल में महिलाओं की स्थिति गुप्तकाल के समान ही प्रतीत होती है। हर्षवर्धन की माता यशोमती अपने पति की मृत्यु के पश्चात सती हो गयी थी। इसके अतिरिक्त हषवर्धन की बहन राज्यश्री अपने पति की मृत्यु के बाद

सती होने का प्रयास करती है, परन्तु हर्षवर्धन के द्वारा उसे रोक लिया जाता है। इस काल में पुर्नविवाह जैसी प्रथा धीरे धीरे समाप्त हो रही थी। अर्न्तजातीय विवाह का प्रचलन मिलता है। कुलीन वर्ग के लोग एक से अधिक विवाह करते थे। परन्तु एक से अधिक पत्नी होने पर सभी की देख रेख करने की जिम्मेदारी पति की ही होती थी।(12) मनुस्मृति के टीकाकार मेघातिथि ने लिखा है कि पति तथा पत्नी में केवल शरीर रचना में ही अंतर होता हैए कृत्य की दृष्टि से वह पूर्ण तथा संयुक्त होते है।

हर्षवर्धन की मृत्यु के पश्चात तथा दिल्ली सल्तनत की स्थापना के मध्य के काल को पूर्वमध्य काल के नाम से जाना जाता है। इस काल में स्त्रियों के अधिकारों एव स्थिति में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन दृष्टिगत होते है। विदेशी आक्रमणों की प्रचुरत के कारण सामाजिक व्यवस्था को अत्यन्त कठोर बना दिया। इस काल में भारत का राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक पतन के लक्षण दिखाई देते है। इस काल के साहित्य एवं ललित कलाओ में महिलाओं को एक भोग्या के रुप में प्रदर्शित किया गया है।(13) इस काल में सामाजिक व्यवस्थाकारों ने अन्तर्जातीय विवाह को प्रतिबन्धित करने का प्रयास किया। मेघातिथि ने अपनी टीका में लिखा है कि प्रतिलोम विवाह की स्थिति में संतान की जाति माता की जाति से निर्धारित होगी। नारद तथा पाराशर स्मृति में स्त्रियों के पुर्निववाह के लिए कुछ नियम निर्धारित किए गए है। पति के गायब होने, मृत्यु होने, संन्यासी होने तथा जाति बहिष्कृत होने पर ही स्त्रियों को विवाह की अनुमति प्रदान की गयी है। मेघातिथि ने विधवा विवाह का निषेध किया है, परन्तु विशेष परिस्थितियों में नियोग करने का अधिकार प्रदान किया है। इस काल में बाल विवाह तथा बहुविवाह ने स्त्रियों की दशा को शोचनीय स्थिति में पहुँचा दिया था। पुत्री के जन्म होते होते ही उनकी हत्या की जाने लगी। जिससे कि आगे चल कर उसकी सुरक्षा के लिए कोई प्रयास न करना पडे। यदि वह कन्या इस बाल हत्या से बच जाती थी, तो बाल्यवस्था में ही उसका विवाह कर दिया जाता था। विदेशी आक्रमणकारियों से बचने के लिए उसको अपने पूरे जीवन काल में पर्दा प्रथा को अपनाना पडता था। उच्च वर्ण की स्त्रियों को शिक्षा दी जाती थी। मेघातिथि ने लिखा है कि विवाहित स्त्रियों को पति की हर प्रकार से सेवा करनी चाहिए। यद्यपि पति के अत्याचारी होने की स्थिति में उसे राजा से न्याय प्रार्थना करने का अधिकार प्राप्त था।(14) उत्तराधिकार तथा सम्पत्ति में उनको पहले से अधिक अधिकार प्रदान किए गए थे।

राजपूत काल में महिलाओं को सम्मान का विषय माना जाता था। राजपूत अपनी पत्नियों से प्रेम करते थे तथा मान मर्यादा एवं सतीत्व की रक्षा के लिए अपने प्राणों का त्याग कर देते थे। राजपूत कुलों में महिलाओं को अपना वर चुनने के लिए स्वयंवर का अधिकार प्राप्त था। राजपूत काल में बाल विवाह बड़े पैमाने पर होने लगा था। समाज में सती प्रथा एवं जौहर प्रथा जैसी परम्परा चल रही थी। जौहर प्रथा के अर्न्तगत राजपूत महिलाए सामूहिक रुप से आत्मदाह करती थी। विधवाओं को घृणा की दृष्टि से देखा जाता था तथा उनके दर्शन मात्र को अशुभ माना जाता था। धार्मिक कार्यो से उनको वंचित कर दिया गया था। उनके सिर के बालों को मुडवा दिया जाता था। चालुक्य वंशीय विजयभट्टारिका तथा कश्मीर की रानी दिद्दा ने सफलता पूर्वक प्रशासन का संचालन किया।(15) चालुक्य शासन के दौरान अनेक महिलाओं को गवर्नर के रुप में नियुक्त किया गया। इसके अतिरिक्त अनेक प्रशासनिक पदों पर महिलाओं ने सफलतापूर्वक कार्य किया। कश्मीर में अनन्तवर्मन की पत्नी सूर्यमती राज्य की वास्तविक शासिका के रुप में कार्य करती रही। काकतीय वंश की रानी रुद्राम्मा ने सफलता पूर्वक लगभग चालीस वर्षो तक शासन किया। इसके शासन की प्रशंसा वेनिस निवासी मार्कोपोलों ने किया है। राजशेखर की पत्नी अवन्तिसुन्दरी तथा मण्डन मिश्र की पत्नी भारती उस काल में प्रमुख विदुषी स्त्रिया थी। इस काल में महिलाओं को सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार प्राप्त थे।

भारत के प्राचीन इतिहास का विश्लेषण करने से हमारे सामने यह तथ्य सामने आता है कि भारतीय महिलाओं की स्थिति सदैव एक समान नही रही थी। प्रारम्भिक दौर में महिलाओं को अनेक अधिकार प्राप्त थेए वही धीरे धीरे उसकी स्थिति में गिरावट होने लगी। पूर्व मध्यकाल तक आते आते महिलाए भोग विलास की साम्रगी के रुप में प्रस्तुत किया जाने लगी। इस कालखण्ड में खजुराहों से प्राप्त अश्लील चित्र उसकी इस स्थिति का द्योतक है। इसी प्रकार इस कालखण्ड में लिखित साहित्य में महिलाओं के सम्बन्ध में अश्लीलता का परिचय मिलता है। इस प्रकार हम देखते है कि जब भारत में दिल्ली सल्तनत की स्थापना हुयी उस समय तक भारतीय समाज नारियों के प्रति अपने निम्नतम स्थिति में पहुँच चुका था। महिलाओं से सम्बन्धित कुरीतियां अब तक भारतीय समाज का एक अभिन्न अंग बन चुका था। भारतीय नारियों के प्रति जो गरिमापूर्ण अभिव्यक्ति प्रारम्भ में मिलता था, उसका अंश मात्र भी अब नही था।

सन्दर्भ ग्रंथ

1 डॉ0 राजेन्द्र पाण्डेय, भारत का सांस्कृतिक इतिहास, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, द्वितीय संस्करण, 1983, पृ0 सं0 27

2 सत्यकेतु विद्यालंकार, मौर्य साम्राज्य का इतिहास, श्री सरस्वती सदन, नई दिल्ली, 2017, पृ0 स0 161

3 ए0 एल0 वाशम, अद्भुत भारत, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, आगरा, पृ0 स0 40

4 द्विजन्द्रनारायण झा, कृष्णमोहन श्रीमाली, प्राचीन भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 2001, पृ0 स0 232

5 डा0 कैलाश चन्द्र जैन, प्राचीन भारतीय सामाजिक एवं आर्थिक संस्थाएँ, मध्य प्रदेश हिन्दी अकादमी ग्रंथ, भोपाल, 1987, पृ0 स0 40

6 रोमिला थापर, भारत का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1993, पृ0 स0 85

7 डा0 राजेन्द्र पाण्डेय, भारत का सांस्कृतिक इतिहास, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, 1983, पृ0 स0 116

8 डा0 वासुदेव विष्णु मिराशी, सातवाहनों एवं पश्चिमी क्षत्रपों का इतिहास एवं अभिलेख, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, 1982, पृ0 स0 3

9 नीलकंठ शास्त्री, ए हिस्ट्री ऑफ साउथ इण्डिया, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1966, पृ0 स0 190

10 उपेन्द्र ठाकुर, सम एस्पेक्टस आफ इंडियन हिस्ट्री एण्ड कल्चर, अभिनव पब्लिकेशन्ज, नई दिल्ली, 1986, पृ0 स0 120

11 नीरज श्रीवास्तव, मध्यकालीन भारत प्रशासन, समाज एवं संस्कृति, ओरियंट ब्लैकस्वॉन, द्वितीय संस्करण, 2018, पृ0 सं0 15

12 ओम प्रकाश, प्राचीन भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास, पंचम संस्करण, 2001, विश्व प्रकाशन, पृ0 सं0 234

13 डॉ0 सुष्मिता पांडेय, समाज आर्थिक व्यवस्था एवं धर्म, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, प्रथम संस्करण, 1991, पृ0 सं0 189

14 आपस्तम्ब गृह्यसूत्र, चिन्नास्वामी शास्त्री सं0 चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी, 1928, पृ0 सं0 45

15 रामशरण शर्मा, सोशल चेन्जिज इन अर्ली मेंडविल इंड़िया, नई दिल्ली, पुर्नसंस्करण, 1981, पृ0 सं0 78